अन्ना, मध्यम वर्ग, मीडिया और नक्सली

कुछ दिन मीडिया में सिर्फ अन्ना हजारे दिखते रहे। पर इसलिए कि वे मीडिया के बाहर समाज में कुछ महत्वपूर्ण कर रहे थे। मीडिया उन्हें दरकिनार नहीं कर सकता था। मीडिया में उनके लगातार दिखने ने उनके काम को और महत्वपूर्ण बना दिया। लगभग एक ऐतिहासिक घटना। जिस मध्यम वर्ग और युवा पीढ़ी को विचारक कोसते नहीं अघाते थे वे घरों के बाहर सक्रिय दिखे। क्रिकेट मैच में नहीं, अन्ना हजारे के आंदोलन में। उनकी सक्रियता अचंभित कर देने वाली थी। आज से पहले वैसी सामाजिक सक्रियता मध्यम वर्ग व इसके युवाओं में कभी देखने को नहीं मिली। अन्ना गांधी के ढ़ब के आंदोलनकारी के रुप में सामने थे और साबित कर रहे थे कि आज भी लोगों को प्रेरित कर उन्हें लड़ाई में उतारने के लिए गांधी के तौर-तरीके बाकी तमाम तौर-तरीकों से भिन्न हैं और बेहद प्रभावी हैं।

हमारे वक्त में कौन से हैं लोगों से संलग्नता बनाने के बाकी तौर-तरीके? आजादी के दौरान विकसित हुए मूल्य और सपने बहुत पहले मर चुके। उनकी लाशें सड़ ओझल हो चुकीं। जीते-जागते लोग वोटों में बदले जा चुके। वे नागरिक नहीं बस वोट हैं। उन्हें अपने पक्ष में लाने के लिए धर्म, जाति, पैसे, शराब जैसी अनेकों चीजों का इस्तेमाल किया जाता है। जो देष या राज्यों को नेतृत्व देने का दावा कर सत्ता में आते रहे अब नंगे हैं। पर उनकी बोली और भंगिमा से लगता है जैसे उन्हें अपनी नंगई से कोई परेशानी नहीं। वे अब भी बड़ी-बड़ी बातें बहुत असानी से बना लेते हैं। शैतान कुरान की आयतें धड़ल्ले से पढ़ रहे हैं। विभिन्न दौरों के इतिहास पुरुष उनके लिए इस्तेमाल की चीज हैं। मार्क्स से लेकर गांधी और भगत सिंह तक, सब को जैसे कंडोम बना दिया हैं इन नंगों ने। इस्तेमाल किया और फेंका। अनेकों राजनीतिक दल परिदृश्य में हैं। पर लगता है वे सब दल एक ही दल हैं। एक ही जैसे हैं उनके तौर-तरीके। समाज और भारतवासियों के लिए एक ही है उनका नजरिया। वे हमारे लोकतंत्र की हर संस्था को कब्जा चुके हैं। हम निरुपाय बना दिए गए हैं। हममें एक सर्वनिषेधवादी रुझान पैदा हो चुका है कि कुछ नहीं हो सकता, कुछ नहीं बदल सकता। बहुत हद तक इसी रुझान ने हमें कर्ता की बजाय महज उपभोक्ता बना कर रख दिया है। सर्वभक्षी। शीला की जवानी से लेकर टी-20 तक हम सब कुछ को भकोस रहे हैं और इस तरह अपने जीवन को कोई अर्थ देने की कोशिश कर रहे हैं। जैसे हमें, हमारी चेतना को सुला दिया गया है और हमें महज कुछ कामों को करने के लिए प्रोग्राम कर दिया गया है। सो नंगे होकर ऐश कर रहे हैं। नए परमेश्वर हो गए हैं। एक देहाती कहावत भी है- नंग बड़ा परमेश्वर से। वे परमेश्वर से बड़े हो गए हैं। हम मनुष्य से दीन-हीन कीट-कीटाणु!! दुनिया शीर्षासन में आ चुकी है। जो सही है, वह गलत है। जो गलत है, वह सही है। ऐसे में अन्ना का आंदोलन, मध्यम वर्ग और युवाओं का उस आंदोलन से सक्रिय जुड़ाव, उस आंदोलन के प्रति मीडिया का व्यवहार हमारे लिए बहुत सारे समाजशास्त्रीय व राजनीतिक सवाल छोड़ जाता है। वे अन्ना ही क्यों हुए जिन्होंने पस्त, चित्त उपभोक्ताओं को शापमुक्त कर मनुष्य और कर्ता में बदल दिया कुछ दिनों के लिए? बाकी ऐसे क्यों न हो पाए? बाकी अनेकों गलत तरीकों से जुटाई गई भीड़ों से काम क्यों चला रहे हैं जबकि वे समाज को बदलने और विकसित करने, गरीबों और वंचितों को न्याय और खुशहाली देने के बड़बोले वायदे और दावे करते रहे हैं? पर लोग इस तरह कभी नहीं उमड़े उनकी ओर एक सच्चे जज्बे से भरे जैसे अन्ना की ओर उमड़े, जैसे कभी गांधी के लिए उमड़ते थे। गांधी की अपार शक्ति को याद करें। आजादी के वक्त के सांप्रदायिक दंगों को रोकने के लिए किए गए उनके उपवास ने वाकई में देश में और सीमा पार दंगे रोक दिए थे और माऊंटबैटन को गांधी को 'वन मैन आर्मी' की संज्ञा देनी पड़ी थी। इन नंगों से अलग नक्सली हैं। भिन्न हैं वे बहुत अर्थों में। भारतीय राज्य की सत्ता के लिए वे चुनौती बन चुके हैं। इसीसे उनकी शक्ति का अंदाज लगाया जा सकता है। वे इन नंगों ने ही पैदा किए हैं। इन नंगों की विकास की जनविरोधी, प्रकृतिहंता धारणाओं ने। इन धारणाओं के मूल में लोभ है। नंग भूखे दैत्य हैं जो सब कुछ को चर जाना चाहते हैं। प्रकृति, मनुष्य, समाज, संस्कृति, मानवीय मूल्य भंडार की संपदा-सब कुछ को। क्या नंग एक आत्मघाती आवेग से परिचालित हैं? क्या इसीलिए वे सब कुछ मूल्यवान पर निरंतर आघात कर रहे हैं? ......अपने सवाल पर लौटें। नक्सली भिन्न होने के बावजूद गांधी और अन्ना जैसा व्यापक और सच्चा जन समर्थन क्यों नहीं जुटा पा रहे? भिन्न होने के बावजूद क्या हैं उनकी सीमाएं? क्या है गांधी और अन्ना की शक्ति? ये बहुत ही बुनियादी किस्म के सवाल हैं। सबसे पहली बात। भारतीय समाज को प्रेरित और उद्वेलित करने वाली शक्ति कभी हिंसा और घृणा नहीं रही। वह करुणा रही है। प्रेम रही है। क्षमा रही है। अकारण ही नहीं कि ब्रिटिश साम्राज्य को उन्मूलित कर देने वाले गांधी से बहुत कम अंग्रेजों ने नफरत की। बल्कि उन्हें ब्रिटेन में समर्थक अधिक मिले। हमें भ्रामक लगने वाली इस उलटबांसी को समझना होगा। घृणा दरअसल प्रतिघृणा, हिंसा प्रतिहिंसा पैदा करती है। ये समाज और सभ्यता के आधार नहीं हो सकते। सभ्यताओं के नष्ट होने का कारण जरूर हो सकते हैं। इन्हें व्यापक जनसमर्थन कभी नहीं मिलता। लेकिन प्रेम, करुणा, अहिंसा का अर्थ यह नहीं कि आप अन्याय के विरुद्ध संघर्ष न करें। गांधी का उदाहरण पर्याप्त है इसे साबित करने के लिए। अन्ना ने एक भी आक्रामक वाक्य अपने वक्तव्यों में नहीं कहा जबकि वे एक बड़ी लड़ाई के बीच थे और उन्हें मिलने वाला जन समर्थन अचंभित कर देने वाला था। वे तब भी जीते। बहुत से शूरवीर आक्रामक भाषा के सिवा कोई दूसरी भाषा बोल ही नहीं पाते और अपनी ही आग में जलते रहते हैं। उनकी आक्रामकता कहीं एक पत्ता नहीं हिलाती, मनुष्य को प्रेरित करने की बात तो बहुत दूर रही। नंग दलों से भिन्न होने और अपने इरादों में बहुत हद तक सही होने वाले नक्सली हिंसा/ प्रतिहिंसा में अपने विश्वास के चलते कुछ प्रांतों के जंगलों और आदिवासियों तक सीमित हो कर ही रहेंगे। उन्हें शहरी बुद्धिजीवियों में भी कुछ समर्थक मिल जाएंगे। कोई अरुंधति रॉय उन पर लेख लिख कर रह जाएगी। और बस। व्यापक जनता का समर्थन उन्हें शायद ही कभी मिले जैसा हाल ही में अन्ना को मिला। उनकी रणनीति और पद्धति में ही भारतीय समाज को प्रेरित-उद्वेलित करने की असफलता अंतर्निहित है। यह वह समय है जब आप महाआख्यानवादी संघर्ष नहीं कर सकते जिसमें सारे मुद्दे समाहित हो जाएं। यह मुद्दों पर एक-एक कर संघर्ष करने का वक्त है। ये संघर्ष जनता को निरंतर दीक्षित करेंगे, वयस्क बनाएंगे। क्या अन्ना द्वारा शुरू किए गए आंदोलन में शिरकत करने के बाद भारतीय मध्यम वर्ग और युवा पहले जैसे रह जाएंगे? क्या इस आंदोलन के साक्षी रहे बच्चों के मानस और सोच पर इसका कोई असर नहीं पड़ेगा? यह संघर्ष अगर क्रमिक रुप से, चरणबद्ध तरीके से आगे नहीं बढ़ाया गया तो जरूर इसका प्रभाव क्षीण, धुंधला हो मिट जाएगा। नंग दलों की लूट जारी रहेगी। प्रेम, करुणा और अहिंसा आत्मविस्तार और साथ ही परविस्तार की संभावना पैदा करते हैं। लोभ आत्मा को एक संकरी, बिना खिड़की की बंद कोठरी बना देता है। लोभ चालित समाज समाज नहीं होता। जंगल होता है जिसमें हर किसी से हर किसी का बैर है। वहां हिंसक, एकाकी, निरंतर परस्पर लड़ती इकाइयां होती हैं, मानवीय संबंध नहीं। उसकी परिणति आत्मविनाश और समाज विनाश होती है। नंग दल उसी में लगे हैं। उन्हें अपने द्वारा किए गए विध्वंस पर गर्व होता है। बाबरी मस्जिद को ढहाना और गुजरात का सांप्रदायिक संहार एक नंग दल के लिए गर्व का विषय अभी तक है। अन्ना के आंदोलन ने दर्शाया कि भारतीय मध्यम वर्ग केवल संचयोन्मुखी और उपभोक्तावादी नहीं है। इस वर्ग का युवा सोचने-समझने-करने की छिपी शक्ति रखता है। अन्ना ने उसी को उद्घाटित कर दिया है। इन्होंने संघर्ष के कायदे का पहला पाठ पढ़ा है। इस दीक्षा को आगे बढ़ाने की जरूरत होगी। लंबे समय तक किसी लक्ष्य के लिए समर्पित होने का अभ्यास इस वर्ग को नहीं है। इस प्रक्रिया में कई खतरे सामने आएंगे। भ्रष्ट लोग इस आंदोलन को हथियाना चाहेंगे। भ्रष्टाचार के प्रतीक बन चुके चौटाला, साध्वी उमा भारती और बाबा रामदेव, साथ ही किरण बेदी का इस आंदोलन में आना वही दर्शाता है। पर लगा कि अन्ना इस मामले में जेपी नहीं हैं। वे उनके आने के निहितार्थ समझते हैं। रामदेव नामक कथित योगी ने तो अपना रंग दिखाना भी शुरु कर दिया। अन्ना अगर इसी पाक-साफ तरीके से आंदोलन को आगे बढ़ाएंगे तो बहुत सारे छिपे भ्रष्टों के नकाब सामने आ जाएंगे। कथित सिविल सोसाइटी के कुछ भ्रष्ट चेहरे नंगे हो जाएंगे। जैसे-जैसे यह संघर्ष आगे बढ़ेगा और कठिन होता जाएगा। अंततः मानना तो होगा ही कि भ्रष्ट लोगों का लोकतांत्रिक संस्थाओं पर कब्जा है और अपने हितसाधन के लिए वे इन संस्थाओं को बहुत कमजोर बना चुके हैं। क्या यह मध्यम वर्ग इस लंबी और कठिन लड़ाई में परिपक्व होता जाएगा या इसका उत्साह चुक जाएगा? रही बात मीडिया की, तो हमें समझ लेना चाहिए कि वह बड़ी पूंजी का कारोबार है और उसका मुख्य मकसद अन्य कारोबारों की तरह मुनाफा कमाना है। लेकिन इस कारोबार की एक खासियत यह है कि इसमें विश्वसनीयता जरूरी है। बड़ी ऐतिहासिक घटनाओं से विमुख बना रह कर यह विश्वनीयता खोएगा, अपना मुनाफा खोएगा।

– प्रो. ललित कार्तिकेय

भारत को विश्वकप : बढ़ता ही जा रहा है क्रिकेट का नशा

28 वर्षों के बाद श्रीलंका को मुंबई के वानखेड़े स्टेडियम में पराजित कर भारत ने क्रिकेट के विश्व कप पर कब्ज़ा जमा लिया है। इससे पूर्व कपिलदेव की कप्तानी में भारत ने विश्व कप जीता था। तब से ले कर अब तक क्रिकेट के स्वरूप में काफ़ी बदलाव आ चुका है। औपनिवेशिक विरासत वाले इस खेल में इतना ज्यादा पैसा बरसने लगा है जितना इस देश में शायद ही किसी उद्योग में बरसता हो। इसके अलावा इस खेल में बड़े पैमाने पर सट्टेबाज़ी होती है और साथ ही बड़े-बड़े सितारा खिलाड़ियों पर पैसे लेकर अपनी टीम को हरवाने के आरोप भी लगते रहे हैं। ये आरोप कई बार सच भी साबित हुए हैं। इसके साथ ही इस खेल पर राजनीतिज्ञों का प्रभुत्व बढ़ा है। भारत के कृषि एवं खाद्य मंत्री वर्षों तक भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड के अध्यक्ष बने रहे और अब आईसीसी के अध्यक्ष हैं। कहा जाता है कि इस बोर्ड के पास बेशुमार पैसा है। अभी ज्यादा दिन नहीं हुए हैं कि ललित मोदी और उनके कुछ खासमखास लोगों ने इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) बना कर उसके माध्यम से अलग-अलग टीमें बना कर बेचनी शुरू की और इसमें दुनिया भर के सितारा खिलाड़ी पालतू जानवरों की तरह नीलाम किये गये। बड़े-बड़े उद्योगपतियों और फ़िल्मी हस्तियों ने जो इन टीमों के मालिक बने थे, बोली लगा कर करोड़ों-करोड़ रुपयों में दुनिया भर के खिलाड़ियों को खरीदा और फ़िर इनके बीच मैचों के आयोजन हुए जिनमें अरबों का कारोबार और घोटाले हुए। इन्हीं मैचों में पहली बार दर्शकों का मनोरंजन करने के लिए विदेशी नस्ल की अधनंगी लड़कियों को बुलाया गया जो खिलाड़ियों द्वारा हर चौका-छक्का मारने पर नृत्य करते हुए अश्लील भाव-भंगिमा प्रदर्शित करती थीं। इन्हें 'चीयर गर्ल' कहा गया। इनका काफ़ी विरोध भी हुआ। पर आईपीएल के हर मैच में इनका जलवा बरकरार रहा। आईपीएल के इन मैचों में अधिक पैसे दे कर क्रिकेट देखने वाले दर्शकों के लिए खेल के दौरान शराब पीने की व्यवस्था भी की गई थी। इन मैचों के आयोजन में ललित मोदी ने जो अरबों का घोटाला किया, इस वजह से उन्हें आईपीएल का अध्यक्ष पद छोड़ पुलिस से बचने के लिए भाग कर लंदन जाना पड़ा। अभी भी वे भारतीय पुलिस और जांच एजेंसियों से बचने के लिए लंदन में ही रह रहे हैं। यह तो रही आईपीएल की बात जिसे भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड का संरक्षण प्राप्त है, पर भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड का काम भी साफ़-सुथरा नहीं है। इसके जो भी अध्यक्ष रहते आये हैं, उन पर भ्रष्टाचार का आरोप लगा है। शरद पवार के पहले जगमोहन डालमिया जब इस बोर्ड के अध्यक्ष थे, उन पर भी भ्रष्टाचार के आरोप लगे थे। बहरहाल, अब विश्व कप जीतने की वजह से दुनिया में भारतीय टीम का मुकाम ऊंचा हो गया है। खिलाड़ियों पर हर तरफ़ से पैसे की बारिश हो रही है। विश्व चैंपियन बनने पर 32.5 लाख डॉलर की राशि तो मिलेगी ही, हर खिलाड़ी को भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड एक-एक करोड़ का पुरस्कार देगा। चयनकर्ताओं को 25-25 लाख और सपोर्ट स्टाफ़ को 50-50 लाख रुपये दिये जायेंगे। इसके अलावा हर राज्य विश्व कप खेलने वाली टीम के हर सदस्य को करोड़ों रुपये दे रहा है। उन्हें महंगी कारें, ज़िंदगी भर ट्रेनों के फर्स्ट क्लास एसी में यात्रा, हवाई जहाजों में मुफ़्त यात्रा की सुविधा और बंगले एवं अपार्टमेंट दिये जा रहे हैं। इतनी ज्यादा कमाई राजनीति को छोड़ कर किसी धंधे में नही होती। इस खेल को इतनी ज्यादा अहमियत दी गई कि जब पाकिस्तान के साथ सेमी-फाइनल मैच होने वाला था, तो प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री को मैच देखने के लिए आमंत्रित किया और गिलानी साहब मैच देखने मोहाली आये। इसे क्रिकेट डिप्लोमेसी कहा गया। सोनिया और राहुल के साथ तमाम प्रमुख राजनीतिज्ञ और उद्योगपति और फ़िल्म स्टार भी वहां मौजूद रहे। जब वानखेड़े में श्रीलंका के साथ फाइनल मैच हुआ तो श्रीलंका के राष्ट्रपति महिंद्रा राजपक्षे और भारत की राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने भी मैच देखा। कहा गया कि महिंद्रा राजपक्षे ने मैच शुरू होने से पहले तीन बार पूजा-अर्चना की थी। पर भगवान ने न सुनी। फाइनल मैच में भी तमाम बड़े उद्योगपति, राजनीतिज्ञ एवं फ़िल्म स्टार मौजूद थे। राहुल बाबा भी गैरराजनीतिक पोशाक में उपस्थित थे। इस मैच में जीत के लिए आम लोगों में भी काफ़ी उत्साह था। खिलाड़ियों का उत्साह बढ़ाने के लिए एक मॉडल पूनम पांडे ने यह घोषणा कर दी थी कि अगर भारत वर्ल्ड कप जीतता है तो वे सरे आम नंगी हो जायेंगी। पता नहीं, उन्होंने ऐसा किया या नहीं? बड़े शहरों के साथ छोटे-छोटे शहरों में भी जगह-जगह मैच देखने के इंतज़ाम किये गये थे। साधारण व्यवसायी हों या रेहड़ी और रिक्शा चलाने वाले, सभी अपनी समस्याओं को भूल कर मैच की तरंग में खोये हुए थे। उनकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि ये मैच खेलने वाले और मैच देखने वाले, सभी करोड़पति-अरबपति हैं। बहुत से दर्शकों ने हज़ारों की कीमत के टिकट ब्लैक में लाखों में खरीदे हैं। इनके सामने कोई दुनियावी समस्या नहीं है, जबकि ग़रीबों के सामने तो पहले पेट भरने की ही समस्या है। सारा समय मैच देखने में बिता दिया और दो पैसे की कमाई तक नहीं कर पाये। भारत के वर्ल्ड कप हासिल कर लेने से जनता को क्या मिला? धोनी और युवराज को तो करोड़ों-करोड़ मिले और अब विज्ञापन के मार्केट में इनका रेट हाई हो गया। इन्हें करोड़ों और मिलेंगे। पर भारत को वर्ल्ड कप मिलने से आम जनता को क्या मिला? क्या यह सवाल हर मुहल्ले में हज़ारों-हज़ार रुपये की आतिशबाज़ी करने वालों ने कभी अपने आप से पूछा है? क्या वर्ल्ड कप मिलने उनकी बेरोज़गारी की समस्या दूर होने वाली है? क्या आसमान छूती महंगाई से कुछ राहत मिलने वाली है? क्या अस्पतालों में डॉक्टरों की फ़ीस कम होगी और दवाओं के दाम घटेंगे? क्या सड़कों की हालत सुधरेगी और राह चलते झपटमारों की संख्या में कमी आयेगी? क्या स्कूलों-कॉलेजों में फ़ीस कम होगी और ग़रीब बच्चों को भी पढ़ने की सुविधा मिलेगी? जिस देश में मुंह अंधेरे लाखों की संख्या में छोटे-छोटे बच्चे और महिलाएं कूड़ा-कचरा बीनती चलती हैं, उस देश में क्रिकेट से बढ़ कर ऐय्याशी क्या होगी? लेकिन क्रिकेट एक नशे के रूप में हमारे समाज में छा गया है। क्या बच्चे, क्या बूढ़े, क्या जवान, क्या लड़कियां, क्या महिलायें, सबके ज़बान पर बस क्रिकेट ही क्रिकेट है। इस नशे को बढ़ावा देने का काम शासक वर्ग कर रहा है जो स्वयं क्रिकेट देखने पहुंच कर जनता को यह अहसास करवाना चाहता है कि सचमुच यह बहुत बड़ी चीज़ है। यही कारण है कि एक बुलावे पर पाक प्रधानमंत्री गिलानी दौड़े चले आते हैं और महिंद्रा राजपक्षे भी, क्योंकि इन्हें भी अपने-अपने देशों की जनता को बरगलाना है और उन्हें मुगालते में रखना है। एक ऐसे समाज में जहां 80 प्रतिशत आबादी को ढंग से भोजन उपलब्ध नहीं है, बरगलाने और मिथ्या राष्ट्र गौरव की भावना से भरने के लिए क्रिकेट अभी सबसे कारगर नुस्खा बना हुआ है। शासक वर्ग इस नशे को जहां तक संभव हो, बढ़ावा देने की कोशिश करेगा। एक मध्यमवर्गीय व्यक्ति यह सहज सोच सकता है कि उसका लड़का भी धोनी और युवराज बन सकता है। देश में नये-नये क्रिकेट कोचिंग सेंटर खुलेंगे, अकादमियां खुलेंगी, रिटायर खिलाड़ियों को बेहतरीन रोज़गार मिलेगा। क्रिकेट का धंधा और भी फलेगा-फूलेगा।